॥ ओ३म् ॥

राम-राज्य कैसे हो ?

स्वामी ओमानन्द सरस्वती

ओ३म्

राम राज्य कैसे हो ?

जो धर्म युक्त व्यवहार में ठीक ठीक वर्तता है उसको सर्वत्र सुख लाभ होता है, और जो विपरीत है वह सदा दुःखी होकर अपनी हानि कर लेता है। इसलिये मुनिवर चाणिक्य ने जो सारे संसार के राजनीति में गुरु हैं अपने जगद्विख्यात कौटल्यार्थ शास्त्र में कहा है—

"सुखस्य मूलं धर्मः" ॥१॥

अर्थात् सुख का मूल आधार-भूत कारण धर्म है, धर्म के बिना मनुष्य पशु के समान दुखी ही रहता है। इसीलिये महर्षि कणाद ने अपने पुनीत ज्ञान के भण्डार वैशेषिक शास्त्र में कहा है—

"यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः सः धर्मः"

जिससे इस लोक और इस जन्म में पूर्ण सांसारिक सुख ऐश्वर्य की प्राप्ति हो और परलोक और पर जन्म में परमानन्द मोक्ष की प्राप्ति होती है, उसे धर्म कहते हैं। इसलिए मनु महाराज कहते हैं—

"धर्म शनैः सञ्चिनुयाद् वल्मीकमिव पुत्तिका।
परलोकसहायार्थं सर्वभूतान्यपीडयन् ॥

जैसे दीमक बम्बी को बनाती है वैसे सब प्राणियों को पीड़ा न देकर परलोक अर्थात् पर जन्म के लिये धर्म का संचय करे।

"नामुत्र सहायार्थं पिता माता च तिष्ठतः।
न पुत्रदारं न ज्ञातिधर्मस्तिष्ठति केवलः ॥

परलोक में न माता, न पिता, न पुत्र, न स्त्री और न सम्बन्धी सहाय कर सकते है किन्तु एक धर्म ही सहायक के रूप में साथ चलता है, कहा भी है—

"मृतं शरीरमुत्सृज्य काष्ठलोसमं क्षितौ ।
विमुखा बान्धवा यान्ति धर्मस्तमनुगच्छति ।।

जब किसी का सम्बन्धी मर जाता है उसको मिट्टी के समान भूमि में छोड़कर पीठ दे बन्धु वर्ग विमुख होकर चले जाते हैं कोई उसके साथ नहीं जाता, किन्तु धर्म ही एक उसका साथी संगी होता है ।

"तस्माद्धर्मं सहायार्थं नित्यं सञ्चिनुयाच्छनैः ।
धर्मेण हि सहायेन तमस्तरति दुस्तरम् ।।"

इसलिये इस लोक (जन्म) और परलोक (पर-जन्म) में सुख की प्राप्ति और सहायार्थ नित्य धर्म का संचय धीरे २ करता जाय, क्योंकि धर्म ही के सहाय से बड़े बड़े दुस्तर दुख सागर को जीव तर सकता है, और परम सुख की प्राप्ति भी धर्म से ही होती है ।

आज-कल के युवक जो पाश्चात्य शिक्षा के रंग में रंगे हुये ह, प्रायः उनको यह भ्रम होता है कि अंग्रेज आदि अधर्मी होते हुये भी आज सुखी दिखाई देते हैं ।

वे यह नहीं जानते जिस समय कोई अधर्म व पाप करता हैं उसी समय उसको पाप का फल नहीं मिलता, इसलिये मूर्ख लोग यह समझ बैठे है कि पाप का फल सुख है, पापी का पापाचरण उसके सुख के मूलों को धीरे २ काटता चला जाता है । पहले पहले पापी बढ़ता दिखाई देता है । जैसे मनु जी कहते हैं—

अधर्मेणैधते तावत्ततो भद्राणि पश्यति ।
ततः सपत्नाञ्जयति समूलस्तु विनश्यति ।।

जैसे तालाब के बन्ध को तोड़कर जल चारों ओर फैल जाता है, वैसे पापी धर्म की मर्यादा को छोड़कर मिथ्याभाषण, कपट, पाखण्ड, तथा रक्षा करने वाले वेदों का खण्डन और विश्वासघातादि कर्मों से पराये धनादि पदार्थों को लेकर प्रथम बढ़ता है, पश्चात् धनादि ऐश्वर्य से खान-पान, वस्त्र, आभूषण यान, स्थान, मान प्रतिष्ठादि सांसारिक

ठाठ-बाट को प्राप्त होता है । कभी अन्याय से शत्रु तक को जीतता है कुछ समय के लिये राज्य श्री को भोगता है । किन्तु जैसे जड़ से काटा हुआ वृक्ष नष्ट हो जाता है वैसे ही अधर्मी भी शीघ्र ही नष्ट हो जाता है । महाभारत के कर्ता महर्षि वेदव्यास जी ने कहा है—

"धारणाद् धर्म इत्याहुः धर्मो धारयते प्रजाः ।
यत् स्याद् धारणा संयुक्तं, स धर्म इति निश्चयः ।।"

इस का भावार्थ यही है कि सबका कारण करने वाला धर्म ही है । इसी से संसार टिका हुआ है, और धर्म का आचरण करने से ही सच्चा सुख प्राप्त होता है अतः ऋषियों के बताये सत्यादि धर्म के नियमों के पालन किए बिना हम सुखी नहीं हो सकते । वेद शास्त्र, प्राचीन ऋषि महर्षि तथा भारत के आधुनिक सुधारक महात्मा गांधी आदि भी धर्म को ही सुख की प्राप्ति का साधन मानते हैं और साथ ही धार्मिक बनने का उपदेश भी देते हैं । किन्तु देश के युवक प्रति-दिन प्रायः आचार हीन और पापी बनते जा रहे हैं और धर्म से कोसों दूर भाग रहे हैं । भारतवर्ष पुनः कैसे धर्म परायण हो ? इसका उत्तर मुनिवर चाणिक्य देते हैं—

रोटी का प्रश्न—

"धर्मस्य मूलमर्थः" ।।२।।

धर्म का मूल कारण अर्थ (धन) है । जब तक किसी मनुष्य वा देश की अर्थ (धन) की समस्या नहीं सुलझती, तब तक वह धार्मिक वा सुखी नहीं हो सकता । जब तक मनुष्य के पेट में दो रोटी न पड़ जायें, तन ढकने को वस्त्र और बसने को झोंपड़ा न मिल जाय, तब तक वह धर्म चर्चा सुनने को उद्यत नहीं होता । भूखे आदमी को स्वप्न भी रोटी के ही आते हैं । गृहस्थी तो दूर रही रोटी और लङ्गोटी के बिना तो साधु का भी काम नहीं चलता । आज दरिद्रता ने धर्म को धक्के दे दिये हैं । भूख की भभकती अग्नि में धर्म भस्मसात् हो रहा है । यह

धांय २ करके दावानल का भयङ्कर रूप धारण कर रही है। सारा संसार ही इसकी लपलपाती लपेट में जल रहा है। ऐसी अवस्था में बेचारे धर्म को कौन पूछता है। प्रत्येक प्राणी पशु (पश्यति स्वार्थमिति पशुः) बनकर अपने पेट की ओर देख रहा है। यह स्वार्थी अन्धा संसार फिर धर्म की ओर दृष्टि कैसे उठाये। सच ही कहा है भूखे को धर्म-कर्म नहीं सुहाता, इसलिये—

'भूखे भजन न हो गोपाला।
ये लो अपनी कण्ठीमाला।।"

इसलिये हमारे ग्रामों में भी लोकोक्ति प्रसिद्ध है।

"पहिले पेट पूजा, पीछे काम दूजा"

इसलिये मनु महाराज ने कहा है—

"बुभुक्षितः किं न करोति पापम्"

भूखा आदमी कौनसा पाप नहीं करता।

"सच है मरता क्या न करता।"

अकाल पीड़ित कई दिन के भूखे चाक्रायण ऋषि ने हस्तिपक (महावत) के उच्छिष्ट (झूठे) भोजन को खा लिया पुनः सामान्य मनुष्य की तो बात ही क्या है। महर्षि पतञ्जलि ने महाभाष्य में ठीक ही कहा है—

"बुभुक्षितं न प्रतिभाति किञ्चित्"

भूखे प्राणि को कुछ भी अच्छा नहीं लगता। इतिहास साक्षी है। भूखी सेना महाराणा प्रताप और गुरु गोविन्द सिंह का साथ नहीं देती। जिस समय जङ्गली बिलाव कई दिन के भूखे प्राणों से प्यारे बालक के हाथ से घास की रोटी को भी छीन कर भाग जाता है, भूख से व्याकुल बालक तड़फता और बिलबिलाता है। उस समय महाराणा प्रताप का वज्र सम हृदय और दृढ़ संकल्प मन भी घबरा उठता है। सच ही है

कोई विरले महात्मा होते हैं जिन को इस प्रकार की आपत्तियाँ धर्म मार्ग से विचलित नहीं कर सकती। किन्तु इससे यह न समझ लेना कि धन ही धर्मात्मा बनाने में एक मात्र कारण है। जहाँ केवल एक मात्र धन की पूजा होती है, वहां से धर्म का बिस्तर बंध जाता है।

इसीलिये मनु जी कहते हैं—

"अर्थकामेष्वसक्तानां धर्मज्ञानं विधीयते।"

जो अर्थ (धन) और विषय भोग में आसक्त नहीं होता उसी के लिये धर्म के ज्ञान का विधान किया है। यदि केवल धन ही धर्म का कारण होता हो धनी वेश्यायें और निर्धनों का रक्त शोषण करने वाले धनाढ्य-पूंजीपति भी धर्मात्मा होते। निस्संदेह धन धर्मपालन में सहायक होता है किन्तु एक मात्र कारण नहीं। अनेक सज्जनों को यह शङ्का होगी कि इस समय तो सभी के पास नोटों की गड्डियाँ हैं, फिर भी लोग धर्मात्मा क्यों नहीं बन जाते? यथार्थ में अर्थ पैसा नहीं। अर्थ उन पदार्थों का नाम है जिनसे मनुष्यादि प्राणियों की आवश्यकताएं पूरी होती हैं। नोटों की गड्डियों की गड्डियां देने पर भी शुद्ध गोघृतादि पौष्टिक पदार्थ आज ऋषियों की पवित्र भूमि में अप्राप्य हैं। आज ऋषियों की सन्तान शुद्ध दुग्ध और घृत के स्थान पर वनस्पति वा रेली तेल खाकर अन्धी हो रही है। आज भारत के युवक ही नहीं अपितु बालकों की आँखों पर भी विदेशी ऐनक देखकर लज्जा से सिर झुक जाता है। कहाँ "पश्येम शरदः शतम्" के अनुसार सौ वर्ष की आयु तक हमारी आँखें ठीक काम करती थीं, आज हमारे बालकों की भी यह दुर्दशा कि विदेश से नकली आँखें (उपनेत्र) मंगा कर देखते हैं। इस कारण 'जिस देश में शुद्ध घी दूध, की नदियां बहती थीं आज उसी के दूध घृत के लिये हम तरस रहे हैं।'

महाभारत काल में देश की जन संख्या सोलह करोड़ थी और गायों की संख्या छयानवें करोड़ थी, गौएं भी कैसी जो डेढ़ २ दो दो

मृत दूध देने वाली थी। एक एक मनुष्य के भाग में छः छः गौएं आती थी, ऐसी अवस्था में उन्हें अन्न खाने की क्या आवश्यकता होगी। जब गवा क्षीरममृतं वै' गौओ का घी, दूध यथेच्छ मिलता था तभी तो भीम, अर्जुन जैसे योद्धा जो हाथियों को पकड़ कर आकाश में उछाल देते थे, 'पुष्टयं गोपालम्' पवित्र वेदाज्ञा के अनुसार महात्मा कृष्ण जैसे योगिराज गौएं चराते थे तथा, गव्य-अमृत का पान करते थे, इसी कारण उन की पवित्र बुद्धि से निकली हुई गीतामृत का पान विश्व वन्द्य महात्मागांधी भी अपने जीवन के अंतिम दिवस तक करते रहे हैं। 'आहार शुद्धौ सत्वशुद्धिः, सत्वशुद्धौ ध्रुवा स्मृतिः' के अनुसार प्राचीन ऋषियों ने गौओं के घी-दूध का शुद्धाहार करके ही संसार को 'दर्शनों' का इतना ऊंचा ज्ञान दिया कि जिस के आगे आधुनिक ज्ञान पासंग भी नहीं। प्राचीन काल में घी दूध का इतना बाहुल्य था कि भारतवर्ष में घी-दूध का बेचना पाप समझा जाता था। घी दूध बेचने की बात तो दूर रही, दूध देने वाली गायें तथा साँड भी नहीं बेचे जाते थे।

"उत्कालितपुंसागावो वाहाय विक्रयाय च भवन्ति"

अर्थात् नपुंसक किये हुए बैल ही विक्रय तथा बोझ ढोने के लिये होते हैं।

अब भी ग्रामों में लोकोक्ति प्रसिद्ध है—

"जिसने दूध बेच दिया, उसने पूत बेच दिया"

जैसे पुत्र बेचना पाप है वैसे दूध बेचना भी पाप समझा जाता है। बाबा नन्द के पास जिनके यहां—योगिराज कृष्ण का बाल्यकाल में पालन-पोषण हुआ—नो लाख गौएं बताई जाती हैं।

उपनिषत् काल की ऐसी ही अवस्था थी, महाराज जनक ने महर्षि याज्ञवल्क्य को एक ही समय में दश हजार गौएं दान दीं। गौएं भी कैसी जिनके सींग स्वर्ण (सोने) में मंढे हुए थे। इससे ज्ञात होता है कि प्राचीन काल में हमारी आर्थिक अवस्था कितनी ऊंची थी।

जाने दीजिये प्राचीन बात को। सिकन्दर के समय ही हमारे देश की गौएं इतना दूध देती थीं, कि सिकन्दर उन पर मोहित हो गया और तीन हजार अच्छी २ गौएं छांट कर ले गया। मेगस्थनीज चीनी यात्री लिखता है कि भारत में मुझे पीने को जल नहीं मिला जल के स्थान पर दूध ही दिया गया। वह लिखता है मैंने सारे भारतवर्ष में कोई मनुष्य छः फिट से कम लम्बा नहीं देखा। हा! आज छः फिट का युवक कोई ढूंढने से ही मिलता है। हा!! शोक, हम कितने गिर गये!!! इसका एक कारण खान-पान के पदार्थों का अभाव ही है। यवन काल में भी आज से तो हमारी अच्छी ही अवस्था थी। जिस समय महमूद गज़नवी ने सोमनाथ के मन्दिर को तोड़ा तथा लूटा मुसलमान इतिहासकार लिखता है, कि मन्दिर का एक एक घण्टा (बजाने का) दो सौ मन स्वर्ण (सोने) का था। जब महादेव की मूर्ति को तोड़ा गया तब उस में से ऐसे अमूल्य हीरे, रत्न निकले जिन के एक २ के मूल्य से सारी गजनी का राज्य खरीदा जा सकता था। एक ही बार नहीं सतरह बार महमूद गज़नवी ने भारतवर्ष को लूटा, प्रत्येक बार हजारों ऊंट सोने, चांदी, अमूल्य रत्न और हीरों से भर २ कर ले गया। इसी तरह न जाने कितने ही विदेशी लुटेरे आते रहे, और इस सोने की चिड़िया-भारत को लूट लूट कर ले जाते रहे, यहाँ तक कि हम को सर्वथा दरिद्र और भूखा बना दिया। आज हमारे पास है ही क्या? न खाने को अन्न है, न देह ढकने को वस्त्र, विदेश से अन्न आता है तब जाकर थोड़ा बहुत हमारे पेट में पड़ता है।

इससे तो बादशाह अकबर के समय में ही हमारी अवस्था अच्छी थी। जब एक रुपये का:—

तीन मन गेहूं,
सोलह सेर घी,
और चौसठ सेर दूध बिकता था।

उस समय में भी बीस सेर से कम दूध देने वाली कोई गाय नही थी। इस समय की भयानक अवस्था से आप सब परिचित ही हैं, कि एक रुपये का सेर वा डेढ सेर गेहूं, दो छटांक घृत (घी) [वह भी शुद्ध नही] तथा एक सेर दूध [मक्खन निकला हुआ] यह है हमारे देश में जीवन उपयोगी पदार्थों की अवस्था। आर्थिक दृष्टि से हमारा कितना भयंकर पतन हुआ। अतः मनुष्यों का स्थान कीड़े मकोड़ों ने ही ले लिया है। आज अर्जुन, भीम की सन्तान पुच्छविहीन भेड़ बकरी के समान रींग रींग कर अपने दीन काट रही है। फिर यह भूख और दरिद्रता कैसे दूर हो ? और हम फिर से कैसे वीर, बलवान् और शूर हों ? क्या हमारी आर्थिक अवस्था फिर पहले के समान हो सकती है ? मुनिवर चाणक्य इसका उत्तर देते हैं।

अर्थस्य मूल राज्यम् ॥३॥

अर्थ का मूल राज्य है यथर्थ में दरिद्रता, भूख आदि दुखों को राज्य ही दूर कर सकता है। कहने को तो स्वदेशीय, विदेशीय भला बुरा किसी भी प्रकार का राज्य हो वह राज्य ही कहलाता है, किन्तु राज्य तो वही है जो स्वराज्य और सुराज्य एक साथ हो। विदेशी राज्य के विषय में तो महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज लिखते हैं—

कोई कितना ही करे, परन्तु जो स्वदेशीयराज्य होता है, वह सर्वोपरी उत्तम होता है। अथवा मतमतान्तर के आग्रह रहित, अपने और पराये का पक्षपातशून्य, प्रजा पर माता-पिता के समान कृपा, न्याय एवं दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।"

हम लगभग एक सहस्र वर्ष से विदेशियों के आधीन अथवा पादाक्रान्त रहे हैं। इस लम्बी दासता ने हमारे धनादि सुख ऐश्वर्य का नाश करके इस पवित्र आर्यभूमि को सर्वथा मिट्टी में मिला दिया है। महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज लिखते हैं :—

"जितने मूल्य से जितना दूध और घी आदि पदार्थ तथा बैल आदि पशु सात सौ वर्ष के पूर्व मिलते थे उतना दूध घी और बैलादि पशु इस समय दस गुणे मूल्य से भी नहीं मिल सकते क्योंकि सात सौ वर्ष के पीछे इस देश में गवादि पशुओं के मारने वाले मांसाहारी विदेशी मनुष्य बहुत आ बसे हैं, वे उन सर्वोपरी (गवादि) पशुओं के हाड़, मांस तक नहीं छोड़ते तो (नष्टे मूले नैव पत्रं न पुष्पं) जब कारण का नाश कर दें, तो कार्य नष्ट क्यों न हो जाय ?" सत्य ही है जब गवादि पशु ही नहीं रहे तो दूध, घी और अन्न कहां से आये ? "इसीलिये यजुर्वेद के प्रथम ही मन्त्र में परमात्मा की आज्ञा है—

"अघ्न्या यजमानस्य पशून् पाहि"

हे पुरुष ! तू इन पशुओं को कभी मत मार और यजमान अर्थात् सब के सुख देने वाले जनों के सम्बन्धी पशुओं की रक्षा कर, जिससे तेरी भी पूरी रक्षा हो। इस लिये ब्रह्मा से ले के आज पर्यन्त आर्य लोग पशुओं की हिंसा में पाप और अधर्म समझते थे और अब भी समझते हैं। इनकी रक्षा से अन्न भी मंहगा नहीं होता, क्योंकि दूध आदि के अधिक होने से दरिद्री को भी खान-पान में दूध मिलने पर न्यून ही अन्न खाया जाता है, और अन्न के कम खाने से मल भी कम होता है, और मल के न्यून होने से दुर्गन्धि भी न्यून होती है, दुर्गन्धि के न्यून होने से वायु और वृष्टि जल की शुद्धि भी विशेष होती है, उससे रोगों की न्यूनता होने से सबका सुख बढ़ता है।' 'देखिए जो पशु निःसार घास, तृण, पत्ते, फल, फूल आदि खावें और सार दूधादि अमृत रूपी रत्न देवें, हल गाड़ी में चल के अनेक विध अन्नादि उत्पन्न कर सब वुद्धि, बल, पराक्रमता को बढ़ा कर नीरोगता करें।' "जिनके मरे पर चमड़ा भी कण्टक आदि से रक्षा करे, जङ्गल में चर के अपने बच्चे और अपने स्वामी के लिए दूध देने को नियत स्थान पर चली आवें, अपने स्वामी की रक्षा के लिये तन, मन, धन, लगावें, जिनका सर्वस्व राजा

ग्रौर प्रजा ग्रादि मनुष्यों के सुख के लिए है इत्यादि शुभ गुण युक्त सुख कारक पशुग्रों के गले छुरों से काट कर जो ग्रपना पेट भर संसार की हानि करते हैं, क्या संसार में उनसे भी ग्रधिक विश्वासघाती, ग्रनुपकारी, दुःख देने वाले ग्रौर पापी जन होंगे ?" "हे मांसाहारियों ! तुम लोग जब कुछ काल के पश्चात् पशु न मिलेंगे तब मनुष्यों का मांस भी छोड़ोगे वा नहीं ? हे परमेश्वर ! तू क्यों इन पशुग्रों पर [जो कि बिना ग्रपराध मारे जाते हैं] दया नहीं करता ? क्या उन पर तेरी प्रीति नहीं है ?……क्यों इन मांसाहारियों के ग्रात्माग्रों में दयाप्रकाश कर निष्ठुरता, कठोरता, स्वार्थपन ग्रौर मूर्खता ग्रादि दोषों को दूर नहीं करता ? जिससे ये इन बुरे कामों से बचें ।"

विदेशी दासता के कारण भारतीय भी मांसादि गन्दे ग्रौर ग्रभक्ष्य-पदार्थों को खाने लगे हैं, ग्रौर निर्दोष प्राणियों की कबरें ग्रपने पेटों में बनाते हैं । ग्राज स्वराज्य होने पर भी गवादि उपयोगी पशुग्रों की रक्षा का कोई ध्यान नहीं । ग्रभी बूचड़खाने पूर्व की नांई वैसे ही खुले हुए हैं । गवादि पशु दिन पर दिन दिन घटते जाते हैं । एक ग्रोर तो हमारी सरकार दुहाई देती है कि देश में ग्रन्न पैदा करो, ग्रन्न की बहुत कमी है । इधर ग्रन्न ग्रौर ग्रन्न के पैदा करने वाले कृषक पशु ग्रादि की यह दुर्दशा ! क्या हमारी सरकार इस ग्रोर ध्यान देगी ? पंजाब सरकार को तो ग्रपने परस्पर के घरेलू जगड़ों से ही ग्रवकाश नहीं है ग्रौर केन्द्रीय सरकार पर कार्य भार ग्रधिक तथा ग्रापत्तियों की भरमार है, ग्रौर इन मूक पशु ग्रौर कृपकों की बात पहुँचावे भी कौन ? ऐसी ग्रवस्था में किसानों के हृदय में विद्रोह की भावना पैदा हो रही है । एक ग्रोर तो हमारी सरकार को कम्युनिस्टों का भावी भय है, इधर ऐसी ग्रवस्था में ये भोले किसान कम्युनिस्टों वा सोशिलिस्टों के पंजे मे कैसे बचा सकते हैं । उनकी मनोमोहिनी मीठी-२ बातें इनको मोह ही लेती हैं । हमारी सरकार को शीघ्रताशीघ्र इस पर ध्यान देना चाहिये, इसी में इस का

हित है । महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज का यह वाक्य सोलह ग्राने ठीक है :—

"राजा उसी को कहते हैं जो शुभ गुण, कर्म, स्वभाव युक्त प्रकाशमान, पक्षपात, रहित न्याय धर्म का सेवक, प्रजाग्रों में पितृवत् वर्त्ते ग्रौर उनको पुत्रवत् मान के उनकी उन्नति ग्रौर सुख बढ़ाने में सदा यत्न किया करे ।"

विदेशी शासन का तो ग्रन्त हो गया, दासता चली गई, किन्तु विदेशीयों के संसर्ग ग्रौर दासता के कारण जो हमारे ग्रन्दर भयङ्कर दोष ग्रौर दुर्गुण ग्रा गये हैं, उनका दूर होना ग्रसम्भव तो नहीं हाँ कठिन ग्रवश्य है । पता नहीं हमारे राज्याधिकारियों को पशुग्रों ग्रौर किसानों की रक्षा का ध्यान क्यों नहीं ?

"जब पशु न्यून होते हैं तब दूधादि पदार्थ ग्रौर खेती ग्रादि कार्यों की घटती होती है, ग्रौर गवादि पशुग्रों के नाश होने से राजा ग्रौर प्रजा का भी नाश हो जाता है ।" [महर्षि स्वामी दयानन्द]

जिस देश में राजाग्रों का राजा किसान ग्रौर गवादि कृषि उपयोगी पशु सुखी ग्रौर सुरक्षित नहीं होते, उस देश का कल्याण परमात्मा भी नही कर सकता, ग्रौर वहां का राज्य-रामराज्य वा सुराज्य नहीं हो सकता ।

इतिहास के ग्राधार पर कह सकते हैं कि प्राचीन काल में ग्रसंख्यों वर्ष हमारे पुरुषाग्रों ने सच्चे सुराज्य का भोग किया है, उसका एक प्रतीक (नमूना) ग्रश्वपति महाराज का राज्य था, वे उद्दालक ग्रादि मुनियों का यथायोग्य सत्कार करते हुए ग्रपने राज्य के विषय में कहते है :—

"न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यपो ।
नानाहिताग्निर्नाविद्वान्न स्वैरी स्वैरिणी कुतः ।।"

हे महर्षियो ! मेरे राज्य में न चोर, न कदर्य (कन्जूस धनी) न

मद्यादि किसी भी प्रकार का नशा करने वाला है, सभी अग्निहोत्री अर्थात् ईश्वर के भक्त और आस्तिक हैं, न कोई अशिक्षित वा अनपढ़ हैं, सभी आबाल वृद्ध वनिता शिक्षित और विद्वान् हैं, न कोई व्यभिचारी पुरुष है फिर व्यभिचारिणी स्त्री कैसे हो सकती है ?' यथार्थ में ऐसा ही राज्य सुराज्य होता है। ऐसे राज्य में अधर्म, दुख और दरिद्रता आदि कैसे ठहर सकते हैं ! कहां स्वर्ग समान अश्वपति का राज्य और कहां आजकल के संसार की नारकीय अवस्था। इस समय की भारतवर्ष की अवस्था को ही लिजिये, कहने को स्वराज्य तो मिल गया, किन्तु राज्याधिकारियों और प्रजा की वही पुरानी चाल है। अपने कर्त्तव्य का किसी-किसी को ही ध्यान है। अंग्रेज चले गये, किन्तु सभी भारतीयों को पापकर्म करने में सिद्धहस्त और निष्णात कर गये। चोर बाजारी, भ्रष्टाचार (रिश्वत) पहले से भी अधिक बढ़ रहे हैं। छोटे बड़े प्रायः सभी राज्याधिकारी, कांग्रेश के भी अनेक छोटे बड़े सेवक व लीडर बहती गङ्गा में हाथ धो रहे हैं। जयपुर कांग्रेस अधिवेशन में विवश और दुखी होकर नेताओं को यह प्रस्ताव पास करना पड़ा है, कि प्रत्येक कांग्रेसी उच्चादर्श उपस्थित करे, इसी बुराई को दूर करने के लिए राष्ट्रीय महा सभा ने यह सरक्यूलर (आज्ञा पत्र) दिया कि 'कोई कांग्रेसी राज्याधिकारियों के कार्य में हस्तक्षेप न करें। इतना ही नहीं कभी-कभी हमारे प्रधान मन्त्री विक्रमी सम्वत् २००६ के नेता सर्व श्री पण्डित जवाहर लाल नेहरु; गृहमन्त्री आधुनिक चाणक्य लौहपुरुष पूज्य सरदार पटेल; राष्ट्रपिता सर्व श्री महात्मा गांधी के स्थानापन्न श्री विनोवा भावे आदि देश हितकारी महापुरुष सुधाररत चेतावनी देते रहते हैं। किन्तु कोई भी टस से मस नहीं होता और 'वही है चाल वेढंगी जो पहले थी सो अब भी है' के अनुसार ज्यों के त्यों हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे नेताओं के शब्द बहरे कानों पर पड़ते हैं, पुराना ढङ्ग और ढांचा जैस का तैसा है। सौगन्ध खाने को ही एक आध व्यक्ति बदला है जो अपने

कर्त्तव्य को समझता है ! ऐसी अवस्था में वेचारे क्या करें ? ऐसा कौन सा कष्ट है जो देश को उठाने के लिये उन्होंने नही सहा ? किन्तु सबके सहयोग के बिना देश नहीं उठे तो कैसे उठे ?

सबसे बढ़कर बड़े २ पूंजीपति धनाढ्य व्यक्ति देशद्रोही हैं। जब अपने ही देश में अन्न और वस्त्र की कमी है, ऐसी अवस्था में भी वे चोरी से पाकिस्तान में अन्न वस्त्रादि भेज रहे हैं। कहाँ तो पहले धनियों का धन देश और धर्म के लिये होता था, आज देश और धर्म का गला घोंटकर धन इकट्ठा किया जा रहा है। मद्यादि जिनको ऋषियों ने 'सुरा मलमन्नानाम्' मल मूत्रादि के समान अभक्ष्य ठहराया था, खाने पीने की बात तो दूर रही उसे छूना भी महापाप समझते थे। आज उन्हीं नशीले और गन्दे पदार्थों का सेवन युवा, बाल, वृद्ध और स्त्रियां सभी कर रहे हैं। शराब आदि एक आध नशा होता तो उसे दूर कर देते, यहाँ तो चाय, कहवा, काफी, अफीम, कोकीन, सुलफा, गांजा, चण्डु, पान, बीड़ी, हुक्का, सिगरेट, सिगार और ताड़ी आदि अगणित नशों की भरमार है। घर में, बाहर, गली में, कूचे में, सड़क पर, दुकान पर, स्कूल में, अस्पताल में, मन्दिर में, मस्जिद में, देवल और तीर्थ में तांगे और मोटर में, कार और रेल में, धर्मशाला और स्टेशन पर, टट्टी और स्नानागार में—जिधर भी देखो बीड़ी और सिगरेट के धूएं की भरमार है। पण्डित क्या मौलवी, भक्त क्या पुजारी, शिष्य क्या गुरु, अध्यापक क्या प्रोफेसर, श्रोता क्या उपदेशक, सेवक क्या लीडर, वैरिस्टर और प्लीडर, लेखक, मोहरिर, रीडर, अमीर क्या फकीर, जनता क्या नेता—हमारे सभी राज्याधिकारी यहाँ तक की शिक्षा-मन्त्री और प्रधान-मन्त्री सिगरेट और सिगार के चक्कर में आये हुये हैं। जो न पीता हो उसे भी पीने वाले धुआं छोड़कर पिला ही देते हैं। देश का दिमाग तो सिगरेट आदि के धुएं में उड़ रहा है। और दिल भी धीरे २ इसके विषाक्त धूएं से निर्बल हो—बैठता जा रहा है। फिर देश को कौन सम्भालेगा ! प्रभु ही रक्षक

है। अब हवन, यज्ञ कौन करे ? इसका स्थान तो सिगरेट हुक्के ने ले लिया है, ईश्वर की भक्ति कौन करे ? जब भारतीय संविधान से ही ईश्वर का नाम उड़ा दिया गया है। हमारी शिक्षा नास्तिकता की ओर ले जा रही है। अभी अंग्रेजी तो हमारे सिर पर चढ़ी बैठी है। अंग्रेजी का मारा हुआ भारतीय विद्यार्थी-समाज फैशन और अनाचार की दल दल में फंसा हुआ है। साम्प्रदायिकता की दुहाई देकर शिक्षणालयों से सदाचार और धर्म शिक्षा को धक्के दिए जा रहे हैं। दूसरी ओर स्थान संरक्षण द्वारा साम्प्रदायिकना की नींव दृढ़ की जा रही है। धर्मशिक्षा के बिना संसार का कल्याण हो ही नहीं सकता। 'धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः' धर्महीन मनुष्य पशु ही नहीं पशुओं का भी बड़ा भाई होता है। वह स्वार्थ वश होकर पर हानि मात्र करता रहता है। हमारे नेताओं को पता नहीं धर्म से चिढ़ है, वे धर्म और सम्प्रदाय दोनों को एक पलड़े में रख छोड़ते हैं वे ऋषियों की इस बात को भूल जाते हैं कि—

धर्म वा सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य-जाति की उन्नति का कारण नहीं है।

अन्य शिक्षाओं के साथ धर्म शिक्षा भी अनिवार्य होनी चाहिये। महर्षि दयानन्द जी ने ९६ वर्ष पूर्व ही अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में अनिवार्य शिक्षा के लिये लिख दिया था—

'इस में राज नियम और जाति नियम होना चाहिये कि पांचवें अथवा आठवें वर्ष से आगे कोई अपने लड़कों और लड़कियों को घर में न रख सकें। पाठशाला में अवश्य भेज देवें, जो न भेजे वह दण्डनीय हो' :

अतः सर्व प्रथम हमारे नेताओं को शिक्षा अनिवार्य कर देनी चाहिये। देश का दुर्भाग्य है कि देश के पाप से महात्मा गांधी जी महाराज परलोक सिधार गये, वे मद्य आदि सब प्रकार के नशों और

विषयों मे देश को बचाना चाहते थे। उनकी धर्म और सदाचार शिक्षा में भक्ति और अनुराग था, वे प्राचीन ऋषि मुनियों की शैली का अनुसरण करने वाले व्यक्ति थे। वह देश को ऋषियों का देश बनाना चाहते थे। उनकी तो यह इच्छा थी कि ऐसा समय आजाय, कि हमारे देश के प्रधान मन्त्री महाराजा अश्वपति के समान छाती ठोककर कह सकें, 'मेरे राज्य में चौर, अनपढ़, अशिक्षित और व्यभिचारी आदि कोई भी नर और नारी नहीं हैं। पूज्य महात्मा गांधी जी तो बार-बार यही कहा करते थे कि हम अपने देश में रामराज्य लायेंगे। अब भी हमारे नेता व्याख्यानों में रामराज्य के स्वप्न लेते रहते हैं। लो आपको बाल्मीकि रामायण के आधार पर रामराज्य के दर्शन करा दें। पुरुषोत्तम राम के पिता महाराजा दशरथ का राज्य भी एक आदर्श राज्य था। दोनों के विषय में बाल्मीकि रामायण में लिखा है:—

महाराजा दशरथ का राज्य

कामी वा न कदर्यो वा नृशंसः पुरुषः क्वचित् ।
द्रष्टुमशक्यमयोध्यायां नाविद्वान्न च नास्तिकः ॥८॥
नानाहिताग्निर्नायज्वा न क्षुद्रो वा न तस्करः ।
कश्चिदासीदयोध्यायां न चावृत्तो न संकरः ॥१२॥
कश्चिन्नरो वा नारी वा नाश्रीमान्नाप्यरूपवान् !
द्रष्टुमयोध्यायां नापि राजन्यभक्तिमान् ॥१३॥
सर्वे नराश्च नार्यश्च धर्मशीलाः सुसंयताः ।
मुदिताः शीलवृत्ताभ्यां महर्ष इवामलाः ॥९॥

सारी अयोध्या में न कोई कामी, न कदर्य (कंजूस-धनी) और न ही कोई राक्षस था। अशिक्षित (अनपढ़) और नास्तिक ढूंढने पर भी न मिलता था। सब प्रतिदिन नियम से यज्ञ-याग क ने वाले थे, न कोई क्षुद्राशय अथवा चोर ही था, सारी अयोध्या में कोई वर्ण संकर नहीं

था। न ही कोई नर या नारी दरिद्र था, सब श्रीमान् धनी, मानी सुन्दर और रूपवान् थे। सब देशभक्त और राजा के भक्त थे। सब नर और नारी धार्मिक सुशील और संयमी थे। महर्षियों के समान पवित्र आचार विचार वाले थे तथा सर्वदा आनन्दित रहते थे।

(बाल काण्ड सप्तम सर्ग)

अब राम राज्य के दर्शन कीजिये।

राम राज्य

आजानुलम्बिबाहुः स महावक्षाः प्रतापवान्।
लक्ष्मणानुचरो रामः शशास पृथिवीमिमाम् ॥९६॥
राघवश्चापि धर्मात्मा प्राप्य राज्यमनुत्तमम्।
इजे बहुविधैः यज्ञैः ससुतभ्रातृबान्धवः ॥९७॥
न पर्यदेवन्विधवा न च व्यालकृतं भयम्।
न व्याधिजं भयं चासीद्रामे राज्यं प्रशासति ॥९८॥
निर्दस्युरभवल्लोको नानर्थं कश्चिदस्पृशत्।
नच स्म वृद्धा बालानां प्रेतकार्याणि कुर्वते ॥९९॥
ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्रा लोभविवर्जिताः।
सर्वे लक्षणसम्पन्नाः सर्वे धर्मपरायणाः ॥१०४॥

जानु पर्यन्त जिसकी लम्बी लम्बी भुजायें हैं, विशाल जिसका वक्षःस्थल है ऐसे प्रतापी महाराज राम जिसके लक्ष्मण जैसे भाई सच्चे सेवक हैं, इस (आर्य) भूमि पर राज्य करते थे। धर्मात्मा श्री रामचन्द्र जी ने राजगद्दी पर बैठकर अपने मित्रों तथा भ्रातवर्ग के साथ बहुत प्रकार के यज्ञ किये। जब तक महाराजा राम ने राज्य किया तब तक उनके राज्य काल में न कोइ स्त्री विधवा हुई, न कोई रोगी हुआ, इतना ही नहीं किसी को रोग का भय तक न था, और न ही किसी को सांप ने ही डसा। उनके राज्य में चोर डाकू नहीं थे। दूसरे के धन

को चुराना तो दूर, उसे कोई छूता तक न था और न ही उसके राज्य में कभी किसी बूढ़े ने किसी बालक का दाह कर्म किया। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सब लोभ से रहित थे अर्थात् कोई लालची न था। सब लोग अपना-अपना कर्तव्य करते हुए संतुष्ट और प्रसन्न थे।

रामराज्य पर प्रकृति देवी की कृपा

नित्यपुष्पा नित्यफलास्तरवः स्कन्धविस्तृताः।
कामवर्षी च पर्जन्यः सुखस्पर्शश्च मारुतः ॥१०२॥

वृक्षों में सदा फल फूल लगे रहते थे, उनके तने और डालियां खूब फली रहती थीं, ठीक समय पर वर्षा होती थी, और वायु भी सदा सुखदायी ही बहती थी। ऐसा स्वर्ग समान रामराज्य फिर कैसे हो सकता है? इसका उत्तर मुनिवर चाणक्य देते हैं।

राज्यस्य मूलमिन्द्रियजयः ॥४॥

जितेन्द्रियता ही रामराज्य का मूल है। जब पितृ भक्त पुरुषोत्तम राम जैसे जितेन्द्रिय राजा होते थे तभी स्वर्ग समान उनका राज्य था।

ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं विरक्षति।

वेद के इस 'राजा ब्रह्मचर्य (जितेन्द्रियता) और तप द्वारा राष्ट्र की भली भांति रक्षा करता है' कथनानुसार जो मनुष्य अपने पर राज्य करता है वही संसार पर राज्य कर सकता है। राम पिता की आज्ञानुसार राजपाट को छोड़ कर बन को चला जाता है, विशाल राज्य को तृण के समान समझता है किंचिद् मात्र भी लोभ नहीं करता। राजपाट को ठोकर मारता है। पिता और माता मोहवश बन में से पुनः लौटाने का यत्न करते हैं, किन्तु कर्तव्य परायण राम मोह की बात को नहीं मानता। भरत को राजपाट सौंप देता है, उधर भरत भी राज्य

को ठोकर लगाता है, वह भी उसे स्वीकार नहीं करता। राम के बार-बार आग्रह करने पर केवल बड़े भाई की आज्ञा समझकर राज्य को धरोहर के रूप में संभालता है। राजसिंहासन पर राम की खड़ाऊं रख देता है। और स्वयं भूमि पर डेरा लगा देता है और राजमहल में ही वनवासी के समान जीवन व्यतीत करता है। यह है दोनों भाइयों की त्याग की पराकाष्ठा। आज हमारे देशभक्त छोटे-२ पद तथा अधिकारों के लिये लड़झगड़ रहे हैं। जैसे पटियाला संघ और पंजाब का दृष्य हमारे सम्मुख है। हमारी इतनी पतित अवस्था और हम राम-राज्य के राग अलापें, यह धृष्टता नहीं तो और क्या है? राम तो नीच बाली और राक्षस रावण को भी मार कर उनके राज्य उनके पुत्र अङ्गद तथा उनके भाई विभीषण को सौंप देते हैं। अपने पराक्रम से जीता हुआ शत्रु का राज्य भी लौटा देते हैं। कहां राम जैसे त्यागी कहां स्वार्थान्ध लोभी भारतीय! इतना ही नहीं। राम लक्ष्मण और सीता दोनों १४ वर्ष तक वन में रहते हैं। वानप्रस्थियों के समान ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हैं। राम सीता दोनों भाई बहन के समान रहते हैं, सन्तान पैदा नहीं करते। लक्ष्मण का संयम तो इन से भी अधिक बढ़ जाता है। जिस समय माता सीता का अपहरण पापी रावण करता है वह मार्ग में आभूषण डाल जाती है। सुग्रीव उनको उठाकर राम को देता है, राम लक्ष्मण से पूछते हैं कि ये आभूषण पहिचानो, क्या यह देवी सीता के हैं? लक्ष्मण कहता है—

नाहं जानामि केयूरे नाहं जानामि कुण्डले।
नूपुरेत्वभिजानाशि नित्यं पादाभिवन्दनात् ॥

"मैं केयूर कुण्डलादि भूषणों को नहीं जानता, मैं तो इन गहनों में से केवल नूपुर (बिछवे) ही पहिचानता हूं। मैं माता सीता को पदाभिवन्दन (नमस्कार) करता था, केवल मैंने उनके चरणों को ही देखा है (मुख कभी नहीं देखा)।" धन्य है यतिवर लक्ष्मण। देवी सीता तो तेरी भावज और साली थी, किन्तु तू 'मातृवत् परदारेषु' शास्त्राज्ञा

का पालन करता है। निरन्तर १४ वर्ष देवी सीता के पास रहता है, और उसका मुख तक नहीं देख पाता। आज का गिरा हुआ संसार भावज और साली को क्या समझता है? मैं अपनी लेखनी से नहीं लिख सकता। इसलिये तो लक्ष्मण इन्द्रिय जीत और यती कहलाया, और इन्द्रजीत मेघनाद को भी हराया और मार गिराया। श्री स्वामी शंकराचार्य जी ने ठीक ही कहा है।

'जितं जगत् केन? मनो हि येन'।

सच है इन्द्रिय-विजयी मनुष्य सारे संसार को जीत सकता है। यदि आज हम भारतीयों को यह व्रत दिलायें कि 'तुम सब केवल एक दिन ही ब्रह्मचारी रह जाओ, तो ये अभागे भारतीय एक दिन का ब्रह्मचर्य भी नहीं रख सकेंगे और फिर चाहते हैं, राम राज्य। पहले कोई राम तो बने तभी तो रामराज्य होगा। ब्रह्मचर्य वा इन्द्रिय-विजय के बिना रामराज्य कैसे हो सकता है? फिर हम इन्द्रियविजयी कैसे बनें। मुनिवर चाणक्य उत्तर देते हैं।

इन्द्रियजयस्य मूलं विनयः ॥५॥
विनयस्य मूलं वृद्धोससेवा ॥६॥

इन्द्रियजय का मूल विनय (नम्रता) वा सुशिक्षा है। कहा भी है 'विद्या ददाति विनयम्' विद्या विनय प्रदान करती है, विनय (निरभिमानता) के बिना कोई किसी से शिक्षा ग्रहण नहीं कर सकता। जब तक बालक के समान विनयी और निरभिमानी होकर गुरुओं की शरण में रहता है, तब तक शिक्षा ग्रहण करने में समर्थ होता है। जब विनयभाव से गुरुओं की श्रद्धा से निरन्तर सेवा करता है, अर्थात् वृद्धोपसेवी बनता है, तभी सुशिक्षा से मनुष्य में विनय और इन्द्रिय जीतने की शक्ति उत्पन्न होती है, जैसे कहा भी है।

"गुरुनां विद्यॉ शुश्रूषुरधिगच्छति'।

जो अपने वृद्ध माता पिता और आचार्य की श्रद्धा से सेवा करता

है, विनय को धारण करके उनकी आज्ञानुसार वर्तता है, वह ही ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करके पूर्ण विद्वान् और सुशिक्षित होता है। निरन्तर सच्चे गुरुओ के सहवास और सतसंग से मनुष्य के अन्दर सुशीलता, नम्रता और सब सदगुणों का सहवास होता है। इसलिये तो कहा है—

मातृ मान् पितृ मान् आचार्यवान् पुरुषो वेद, ।

माता पिता और आचार्य ये तीनों जिस को सौभाग्य से विद्वान् और धार्मिक मिलते हैं वह ही पूर्ण विद्वान्, सुशील, जितेन्द्रिय और विजयी होते हैं। मनु महाराज ने ठीक ही कहा है—

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोदसेविनः
चत्वारि तस्य वर्द्धन्त आयुर्विद्यायशोबलम्।
मनु (२। १२१)

जो सदा नम्र सुशील विद्वान् और वृद्धों की सेवा करता है उसकी आयु, विद्या, कीर्ति और बल ये चार सदा बढ़ते हैं, और जो ऐसा नहीं करते उनके आयु आदि चार नहीं बढ़ते। इसलिये वृद्धों की सेवा से विनय नम्रता, दीर्घायु की प्राप्ति, विद्या, बल, सुशिक्षा और यश की प्राप्ति होती है, और विनय से मनुष्य जितेन्द्रिय बनता है। इन्द्रिय विजय से राज्य करने की योग्यता आती है। इन्द्रियविजय के द्वारा ही यथार्थ में स्वराज्य सुराज्य वा राम राज्य बनता है। और ऐसे राज्य में भूख दरिद्रतादि दुःख नहीं ठहरते। ऐसा राज्य यथार्थ में स्वर्ग समान होता है। जब अर्थ का कष्ट नहीं रहता और सुशिक्षा होने से मनुष्य सब धार्मिक बन जाते हैं, तो उन्हें सच्चे सुख की प्राप्ति होती है। उनके पांचों क्लेश* तीनों ताप× दूर भाग जाते हैं। उनका लोक और परलोक दोनों बन जाते हैं, और उनको अभ्युदय (सासारिक सुख) औ निश्श्रेयस् (परलौकिक सुख) अर्थात् सच्चे आनन्द (मुक्ति) की प्राप्ति होती है। परमात्मा करे कि हमारे देश में मुनि वशिष्ठ और महर्षि

विश्वामित्र जैसे वृद्ध अर्थात् सच्चे गुरु और आचार्य हों। उनके चरणों में रहकर और आर्ष शिक्षा+पाकर बालक राम और लक्ष्मण के समान जितेन्द्रिय और सच्चे ब्रह्मचारी बनें कि जिससे हमारे देश में पुनः राम राज्य की स्थापना हो और हमें सच्चे स्वर्ग का आनन्द भोगने को मिले पूज्य महात्मा गांधी की अन्तिम इच्छा भी पूरी हो, और चारों ओर से यही ध्वनि सुनाई दे।

कहेगा जगत् फिर से इक स्वर में सारा।
वही वृद्ध भारत गुरू है हमारा॥

—::o::—

*अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेश।

×आध्यात्मिक, आधिदैविक, आधिभौतिक।

+आर्ष शिक्षा को महर्षि ने अपने अमर ग्रन्थों में पूर्ण रूप से लिखा है। जिस को क्रियात्मक रूप देने के लिए गुरुकुल झज्जर आदि पूरा प्रयत्न कर रहे हैं।

मुद्रक : आचार्य प्रिंटिंग प्रेस, गोहाना रोड, रोहतक, फोन : 72874

स्वामी ओमानन्द जी की रचनाएँ

१. हरयाणा के प्राचीन मुद्रांक	५०१.००	३१. हरयाणा की संस्कृति	१.००
२. हरयाणा के प्राचीन लक्षणस्थान	२००.००	३२. रूस में १५ दिन	१.५०
		३३. मेरी विदेश यात्रा	१.५०
३. वीरभूमि हरयाणा	५.००	३४. जापान यात्रा	२.००
४. शेरशाह सूरी	१.००	३५. काला पानी यात्रा	१.५०
५. वीर हेमू	१.००	३६. नैरोबी यात्रा	१.५०
५. मांस मनुष्य का भोजन नहीं	१.००	३७. शराब से सर्वनाश	.५०
७. ब्रह्मचर्यामृत	.५०	३८. घरेलू औषध हल्दी	१.२५
८. बालविवाह से हानियां	.२५	३९. घरेलू औषध लवण	१.२५
९. स्वप्नदोषचिकित्सा	.५०	४०. घरेलू औषध मिर्च	१.५०
१०. बिच्छूविष चिकित्सा	.२५	४१. भारतीय जड़ी बूटी आक	२.५०
११. सर्पविष चिकित्सा	४.००	४२. „ „ नीम	१.५०
१२. पापों की जड़ (शराब)	.७५	४३. „ „ पीपल	१.५०
१३. हमारा शत्रु (तम्बाकू)	.२५	४४. „ „ बड़	१.५०
१४. नेत्र रक्षा	१.५०	४५. „ „ सिरस	१.५०
१५. व्यायाम का महत्त्व	.६०	४५. गोदुग्ध अमृत है	५.००
१६. रामराज्य कैसे हो	.५०	४७. शाक भाजी से चिकित्सा	२.५०
१७. हरयाणा के वीर यौधेय	७.००	४८. आर्य समाज के बलिदान	१५.००
१८. २८ ब्रह्मचर्य के साधन १ से ११ भाग	१५.७५	अप्रकाशित ग्रन्थ	
		४९. योरोप यात्रा	
२९. श्लीपद चिकित्सा	.५०	५०. भारत के प्राचीन शस्त्रास्त्र	
३०. हरयाणा का संक्षिप्त इतिहास	१.००	५१. महारानी सीता	
		५२. महाराजा नाहरसिंह	

प्रकाशक

हरयाणा साहित्य संस्थान, गुरुकुल, झज्जर, रोहतक

ओ३म्

हरयाणा प्रान्तीय प्राचीन इतिहास के प्रामाणिक ग्रन्थों का

प्रकाशन

जिस प्रकार प्राचीन मुद्रांकों (मोहरों) और लक्षणस्थान (टकसाल) का इतिहास छपा है; उसी प्रकार हम इतिहास के अनेक अमूल्य ग्रन्थ प्रकाशित कर रहे हैं, जिनकी सूची निम्न प्रकार है:—

१. हरयाणा के प्राचीन अस्त्रशस्त्र।
२. हरयाणा की प्राचीन मुद्रायें (सिक्के) १० भागों में।
३. यौधेय मुद्रायें
४. हरयाणा की प्राचीन मृन्मूर्तियां।
५. हरयाणा की प्राचीन प्रस्तरमूर्तियां।
६. हरयाणा में रामायण का प्राचीन मन्दिर।
७. हरयाणा के प्राचीन दस दुर्ग।
८. हरयाणा के प्राचीन क्षत्रियकुल।
९. हरयाणा की प्राचीन शिल्पकला।
१०. हरयाणा के प्राचीन नगर।

ये सभी ग्रन्थ सचित्र, सुन्दर और बढ़िया कागज पर सजिल्द छपेंगे। जो सज्जन ११११) वा अधिक धन देकर सहायता करेंगे, उन दानियों का नाम ग्रन्थों में सचित्र प्रकाशित किया जायेगा। ५०००) तथा इससे अधिक राशि दान देने वाले महानुभावों का चित्र और परिचय सधन्यवाद प्रकाशित किया जायेगा। अतः इस महत्वपूर्ण योजना को तन मन और धन से पूर्ण सहयोग देकर सफल बनायें।

इस प्रकार ये इतिहास के प्रामाणिक बड़े-बड़े ग्रन्थ शीघ्रातिशीघ्र पाठकों को भेंट करना चाहते हैं। मेरा मुख्य कार्य शेष जीवन में यही रहेगा, किन्तु इतिहास प्रेमियों के पूर्ण सहयोग के बिना यह कठिन कार्य पूर्ण नहीं हो सकेगा।

भारत के प्राचीन मुद्रांक

लेखक—स्वामी ओमानन्द सरस्वती। मू० ५०१ रु०

पुरातत्त्वीय शोध के आधार पर लिखे गये इस मौलिक ग्रन्थ में भारत के प्राचीन प्रसिद्ध नगर कौशाम्बी, अहिच्छत्रा, स्रुघ्न, सुनेत, प्रकृतानाकनगर, रोहीतक आदि से उपलब्ध प्राचीन सैकड़ों मुद्रांक (मोहरों) का सचित्र विवरण प्रकाशित किया है। हिन्दी भाषा में इस विषय का प्रथम और स्तुत्य प्रयास किया गया है। श्री स्वामी जी ने पन्द्रह वर्ष और लाखों रुपये लगाकर यौधेय, वृष्णि, पाञ्चाल आदि गणराज्यों के सेनापति, महासेनापति आदि राज्याधिकारियों के मुद्रांक एकत्र किये हैं। प्राचीन भारत के लुप्त इतिहास के पुनर्लेखन में यह सामग्री अपना बेजोड़ स्थान रखती है। पुस्तक संग्रहणीय और पठनीय है।

भारत के प्राचीन टकसाल

लेखक—स्वामी ओमानन्द सरस्वती। मूल्य २०० रुपये

पुरातत्त्व की विशुद्ध सामग्री के आधार पर प्रस्तुत किये गये इस ऐतिहासिक शोध ग्रन्थ में प्राचीन भारत की मुद्रा निर्माण पद्धति पर महत्वपूर्ण प्रकाश डाला गया है। इस ग्रन्थ में कार्षापण यौधेय, भारतीय यवन राजा, कुषाण, सामन्तदेव, आदिवाराह मिहिरभोज, गदिया और भारतसासानी आदि विविध प्रकार की स्वर्ण, रजत और ताम्र मुद्राओं के सांचों का सचित्र और विशद वर्णन किया गया है। यह १८ वर्षों के परिश्रम का अद्भुत और मौलिक प्रयास है। ग्रन्थ वस्तुतः पठनीय और संग्रहणीय है।

निर्देशक :

हरयाणा प्रान्तीय पुरातत्त्व संग्रहालय

(गुरुकुल झज्जर, रोहतक हरयाणा) दूरभाष ४४

हमारे प्रमुख प्रकाशन

१. व्याकरणमहाभाष्यम् (प्रदीप, उद्योत, विमर्श सहित)	१०००.००
२. काशिका	१००.००
३. अष्टाध्यायी (मूल)	५.००
४. कारिकाप्रकाश	४.००
५. लिंगानुशासनवृत्तिः	३.२५
६. फिट्सूत्रप्रदीपः	३.००
७. छन्दःशास्त्र	१५.००
८. काव्यालंकारसूत्राणि	४.००
९. निरुक्तहिंदीभाष्य(दो भाग)	२००.००
१०. योगार्यभाष्य	१०.००
११. सांख्यार्य भाष्य	४०.००
१२. मीमांसार्यभाष्य(१-३भाग)	२६०.००
१३. कुलियात आर्यमुसाफिर(१-२)	१२०.
१४. भारतेतिहासः	१०.००
१५. दयानन्दलहरी	५.००
१६. विरजानन्दचरितम्	२.५०
१७. छान्दोग्योपनिषद्भाष्य	२००.००
१८. स्वातन्त्र्य संग्राम में आर्यसमाज का योगदान	४०.००
१९. इण्टरनेशनल फिलासफी आफ योगा	१००.००
२०. ब्रह्मचर्यमहत्त्वम्	२.००
२१. चारुचरितामृतम्	५.००
२२. बस्तीराम अग्निबाण	३.००
२३. महर्षि दयानन्द जीवनकथा	३.००
२४. ब्रह्मचर्य के साधन(११भाग)	२५..०
२५. बस्तीराम रहस्य	३.००
२६. मानस दीपिका	३.००
२७. पाखण्ड खण्डनी	६.००
२८. वैदिकविनय (तीनों भाग)	६०.००
२९. आत्मानन्द जीवन ज्योति	५०.००
३०. मनोविज्ञान शिवसंकल्प	१६.००
३१. कन्या और ब्रह्मचर्य	२.००
३२. जीवात्मा अणुः विभुर्वा	१.५०
३३. बलिदान	१२५.००
३४. यजुर्वेदसंहिता	६०.००
३५. सामवेद पद्यानुवाद सहित	४०.००
३६. जीव का परिमाण	.७५
३७. वेद-प्रवेश (१-२ भाग)	२.५०
३८. गीताविवेक	१०.००
३९. बृहदारण्यकोपनिषद् भाष्य	१२०.०
४०. वेदविमर्श (भाग १)'	५.००
४१. आसनों के व्यायाम	५.००
४२. स्त्री रोग चिकित्सा	५.००
४३. संस्कृत प्रबोध	५.००
४४. घर का वैद्य (१-५ भाग)	२०.००
४५. सुखी जीवन	७.००
४६. दैनन्दिनी	८.००
४७. महापुरुषों के संग में	४.००
४८. न्यायार्य भाष्य	१००.००
४९. वेदान्तार्य भाष्य	१२०.००
५०. वैशेषिकार्य भाष्य	६०.००
५१. उपनिषत्समुच्चय	१००.००
५२. अथर्ववेद संहिता	१५०.००
५३. ओमानन्द अभिनन्दन ग्रन्थ	१००.००
५४. सामवेद संहिता	४०.००
५५. सामवेद पदसंहिता	२५.००
५६. ऋग्वेद संहिता	२००.००

हरयाणा साहित्य संस्थान गुरुकुल झज्जर (रोहतक)

आर्यसमाज के नियम तथा उद्देश्य

१—सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।

२—ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।

३—वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

४—सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।

५—सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहियें।

६—संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७—सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिये।

८—अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।

९—प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिये किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये।

१०—सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिये और प्रत्येक हितकारी नियम पालने में सब स्वतन्त्र रहें।